Indian Scholar
ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in
An International Multidisciplinary Research e-Journal

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में संस्कृत की भूमिका

डॉ0 धनंजय कुमार मिश्र
विभागाध्यक्ष – संस्कृत विभाग,
एस. पी. कॉलेज, दुमका
एस. के. एम. यू. दुमका,
(झारखंड)

15 अगस्त 1947, भारत की स्वतन्त्रता का दिन! गुलामी की बेड़ियाँ टूटी। कुहासों से काला पड़ा आकाश साफ हुआ। वेदना के शबनम सूख गए। जुल्म की काई फटी। नृशंस अंग्रेजों के अत्याचार से मुक्ति मिली। अहिंसा, त्याग और करूणा के देवता महात्मा गाँधी में सूरज के दर्शन हुए। हमारा शत–सहस्र देशवासियों का सुनहला सपना साकार हुआ। बलिदान व्यर्थ नहीं जाता यह एक बार फिर सिद्ध हुआ। और .....! बलिदान की बात आते ही हमारी आँखें गीली हो उठती हैं। नम आँखों से हम याद करते हैं शहीद रोशन लाल को, जो 'वन्दे मातरम्' गाते हुए फाँसी पर झूल गए। अस्तु!

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का प्रथम शंखनाद यद्यपि 1857ई0 में माना जाता है फिर भी इसका बीजारोपण और अंकुरण तो एक शताब्दी पूर्व ही हो गया था, जो हमें 1757 ई0 से 1856 ई0 तक हुए लोकप्रिय आन्दोलन, विप्लव और विद्रोह के रूप में इतिहास के पन्नों में दृष्टिगोचर होते हैं। 1947 में इस यज्ञ की पूर्णाहुति हुई और फल के रूप में देश को स्वाधीनता। कुटिला मति का दुष्परिणाम भारत विभाजन के रूप में भी सामने आया।

लगभग 200 वर्षों का यह भारतीय इतिहास अनेक राष्ट्रभक्तों, मातृभूमि के सपूतों और राष्ट्र की बलिवेदी पर स्वयं को न्योछावर कर देने वाले वीर–बाँकुड़ों की वीर गाथाओं से भरा–पड़ा है।

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के दीर्घकालिक संघर्ष में संस्कृत भाषा और संस्कृतानुरागियों का योगदान अविस्मरणीय है। उनका 'चिक्षुर–प्रयास' सदैव हमारा प्रेरणास्रोत रहा है। वर्त्तमान पीढी को न केवल उनसे परिचित कराना अपितु उनके भगीरथ प्रयास को जनमानस पर पुनः अंकित कराना आज हमारा ध्येय है।

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में ऐसे अनगिनत नाम हैं जिनका संस्कृत के प्रति अगाध स्नेह था। इनमें से कई तो संस्कृत के उद्भट विद्वान् थे। यथा – गोपाल कृष्ण गोखले, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, वी0 डी0 सावरकर, हरदयाल, मदन लाल ढींगरा, राजा राम मोहन राय, डॉ0 भगवान दास, श्री यज्ञनारायण दीक्षित, प्रो एस0 कुप्युस्वामी शास्त्री, लाल बहादुर शास्त्री, डॉ0 वी0 राघवन, महामना मदन मोहन मालवीय, दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द, बंकिमचन्द चटर्जी, ईश्वरचन्द विद्यासागर आदि।

19वीं शताब्दी के अन्तिम दशक तक संस्कृत भाषा सम्पर्क भाषा के रूप में अखण्ड भारतवर्ष में प्रचलित थी। बाद के दशकों में यह धारा कुछ क्षीण हुई परन्तु संस्कृत के प्रति अनुराग सदैव अक्षुण्ण रहा। नई शिक्षा नीति लागू होने पर अंग्रेजी सम्पर्क भाषा तो बन गई पर यह कभी जनसामान्य की भाषा न हो सकी। ब्रिटिश हुकूमत की साजिश को हमारे राष्ट्रनायकों ने जान लिया। बहुत हद तक हिन्दी सम्पर्क भाषा के रूप में प्रचलित होने लगी थी परन्तु हिन्दी तो संस्कृत की दुहिता के रूप में ही प्रकट हुई।

संस्कृत भाषा के कई उद्घोष स्वतन्त्रता संग्राम में अभूतपूर्ण भूमिका निभाने लगे। यथा – बंकिमचन्द चटर्जी रचित 'वन्दे मातरम्' तो आन्दोलन का प्रथम मन्त्र बना। इसके अतिरिक्त 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत' को महामन्त्र के रूप में स्वामी विवेकानन्द ने अपनाया। 'सत्यं वद' , 'अहिंसा परमो धर्मः' को गाँधीजी ने लोगों के बीच प्रचारित किया। इसी प्रकार की कई सूक्तियाँ स्वतन्त्रता संग्राम के सिपाहियों और

राष्ट्रनायकों का कण्ठ हार बना। जिनमें कुछ प्रमुख हैं – ''जननी जन्मभूमिश्च स्वार्गादपि गरीयसी'', ''माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'', '' सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः'', ''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'', ''सत्यमेव जयते'' इत्यादि।

संस्कृत भाषा ने राष्ट्रप्रेमियों के हृदय में नवसंचार एवं संजीवनी का कार्य किया, यह कहना अतिशयोक्ति न होगा। अंग्रेजी पृष्ठभूमि के सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, मनमोहन घोष, लालमोहन घोष ऐसे भारतीय प्रतिनिधि के रूप में सामने आए जिन्होंने संस्कृत भाषा के प्रति अपनी अटूट आस्था प्रकट की तथा संस्कृतशास्त्रों का गहन अध्ययन कर अमृत तत्त्व से विश्व को परिचित कराने का सराहनीय प्रयास किया।

19वीं शताब्दी में भारतीय धार्मिकविश्वासों, रीति–रिवाजों तथा सामाजिक प्रथाओं का पुनः परीक्षण भारतीय विद्वानों द्वारा प्रारम्भ हुआ जिसके फलस्वरूप ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन आदि संस्थाएँ प्रकाश में आईं। इन संस्थाओं का आधार संस्कृत भाषा पर हीं अवलम्बित था। संस्कृत के प्राचीन शास्त्रों, वेदों, उपनिषदों के गहन अध्ययन के बाद राष्ट्र को नई दिशा देने का मार्ग प्रशस्त हुआ। तात्कालीन सन्दर्भ में आवश्यक तथ्यों को बखूबी अपनाया गया तथा जो तथ्य समानुकूल न थे उन्हें त्याज्य बताया गया, परन्तु संस्कृत हीं प्रेरणास्रोत बनी रही।

यद्यपि संस्कृत भाषा में कई ग्रन्थ भी इस अवधि में रचे गए परन्तु पण्डित अम्बिकादत्त व्यास रचित 'शिवराजविजयम्' स्वतन्त्रता संग्राम के अहले प्रारम्भिक चरण में काफी प्रसिद्ध हुआ। 'शिवाजी' के चरित्र को उज्ज्वलता के साथ इसमें अंकित किया गया जो सदैव राष्ट्रनायकों के लिए आदर्श रहे।

गाँधीजी तो संस्कृत के अनन्य प्रेमी थे। समग्र स्वतन्त्रता संग्राम में गाँधी की भूमिका यदि अतुलनीय है तो निश्चय ही संस्कृत भाषा के प्रति उनका स्नेह अविस्मरणीय है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के मन में संस्कृत भाषा की अभ्युन्नति और स्वतन्त्रतोपरान्त समुचित पद की आवश्यकता के प्रति काफी निष्ठा थी। 17 मार्च 1940 ई0 को 'हरिजन' पत्र में गाँधीजी की अपील द्रष्ट्व्य है – ''मैं इस बात में पूर्णतः सहमत हूँ कि संस्कृत के अध्ययन की खेदजनक उपेक्षा हो रही है। मैं उस पीढ़ी का हूँ, जो प्राचीन भाषाओं के अध्ययन में विश्वास रखती है। मैं नहीं मानता कि ऐसा अध्ययन समय और उपयोग का अपव्यय है। मैं तो मानता हूँ कि वह आधुनिक भारतीय भाषाओं के अध्ययन में सहायक है। जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है यह बात किसी और प्राचीन भाषा की अपेक्षा संस्कृत के पक्ष में अधिक सत्य है और प्रत्येक राष्ट्रवादी को इसका अध्ययन करना चाहिए; क्योंकि इससे प्रान्तीय भाषाओं का अध्ययन अन्य उपायों की अपेक्षा सुगमतर होता है। यह वह भाषा है, जिसमें हमारे पूर्व पुरूष सोचते और लिखते थे। बालक या बालिका को संस्कृत के प्राथमिक ज्ञान से हीन नहीं रखना चाहिए। यह इसलिए आवश्यक है कि हमारे चरित्र और आचार–विचार की शुद्धता तभी बनी रह सकती है, जब हम आचार–विचार–प्रधान और चरित्र को ऊँचा बनाने वाली भाषा संस्कृत को स्वयं पढ़ें और अपने घरों की संस्कृति को उसके अनुरूप बनायें।''

अन्ततः कहा जा सकता है कि भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में आदि से अन्त तक संस्कृत भाषा राष्ट्रप्रेमियों को उचित मार्गदर्शन कराती रही है। चन्द्रशेखर आजाद, चापेकर बन्धु (दामोदर और बालकृष्ण) तो संस्कृत के ऐसे छात्र थे, जो हँसते–हँसते राष्ट्र के लिए बलिदान हो गए। गाँधी, शास्त्री, प्रसाद, तिलक की नीतियाँ संस्कृताधारित थीं। निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में संस्कृत ने अपने विभिन्न रूपों में अविस्मरणीय भूमिका का निर्वाह किया जो युक्तियुक्त ही था।